पहला और दूसरा

थिस्सलुनीकियों

मसीही विश्वासियों के लिए पहला और दूसरा "थिस्सलुनीकियों" नामक बाइबॅल-पुस्तकों का एक अध्ययन

PAHLA AUR DOOSARA THISSLUNEEKION

First Hindi Edition : April-2008

Adapted into Hindi by : **J.P. Pandey**
Assisted by : **R.K. Khullar**

This book is based on the English title "Lessons in 1&2 THESSALONIANS for Growing Believers" (Tim Mcmanigle) published by the Fellowship Bible Church, 3217, Middle Road, Winchester, VA. 22602 (U.S.A.).

Copyright © The Fellowship Bible Church,
Winchester, VA. (U.S.A.).

All rights reserved

विषय सूची

अध्याय	पृष्ठ संख्या
पहला थिस्सलुनीकियों	
एक	5–11
दो	12–16
तीन	17–19
चार	20–23
पांच	24–31
दूसरा थिस्सलुनीकियों	
छः	32–37
सात	38–45

नामक

बाइबॅल-पुस्तकों का एक संक्षिप्त अध्ययन

एक

(पहला थिस्सलुनीकियों)

संत पौलुस ने यह पत्री थिस्सलुनीके नामक नगर की कलीसिया को भेजी थी। पौलुस अपनी द्वितीय सुसमाचार–प्रचार यात्रा के समय थिस्सलुनीके गया था। उस समय तीमुथियुस और सिलवानुस भी उसके साथ थे। उसकी प्रथम सुसमाचार–प्रचार यात्रा के समय बरनबास और मरकुस उसके साथ थे। उसकी प्रथम मिशनरी यात्रा के दौरान, मरकुस (जो यूहन्ना भी कहलाता था), **पिरगा** नामक स्थान में पहुंचने पर, पौलुस और बरनबास को छोड़कर यरुशलेम लौट गया था (प्रेरित0 12:25 एवं 13:13)। मरकुस द्वारा यात्रा के दौरान इस प्रकार उनका साथ छोड़ देने से पौलुस उससे नाखुश था, और अपनी द्वितीय मिशनरी यात्रा के दौरान उसे अपने साथ नहीं ले जाना चाहता था, जबकि बरनबास उसे साथ ले जाने के पक्ष में था। आपसी असहमति के कारण पौलुस और बरनबास अलग–अलग क्षेत्रों में चले गये। बरनबास ने अपने साथ मरकुस को लिया और पौलुस अपने साथ सीलास को ले गया, जो यरुशलेम की मंडली का एक अगुवा था (प्रेरित0 15:36–41)। इस द्वितीय यात्रा के दौरान ही पौलुस और सीलास फिलिप्पी नगर में बन्दीगृह में डाल दिए गए, और वहां से छूटने के बाद थिस्सलुनीके गये थे।

"फिर जब वे अम्फिपुलिस और अपुल्लोनिया से होकर निकले तो थिस्सलुनीके पहुंचे, जहां यहूदियों का एक आराधनालय था। पौलुस अपनी रीति के अनुसार उनके पास गया और तीन सब्त

तक पवित्रशास्त्र से उनके साथ वाद–विवाद करता रहा, और इस बात का अर्थ स्पष्ट करके यह प्रमाणित करता रहा कि मसीह को दुख उठाना और मृतकों में से जी उठना अवश्य था, और वह कहता था, 'यही यीशु जिसका मैं तुम्हारे सामने प्रचार करता हूँ, मसीह है।' उनमें से कुछ लोगों ने विश्वास किया और भक्त यूनानियों के एक बड़े समूह व बहुत–सी प्रमुख स्त्रियों सहित, वे पौलुस और सीलास के साथ मिल गए" (प्रेरित0 17:1–4)। इस प्रकार थिस्सलुनीके में अनेक लोग प्रभु पर विश्वास किए। परन्तु वहां के अधिकतर लोगों ने प्रभु के संदेश का तिरस्कार किया, और विश्वास करने वालों को सताने लगे। वहां से प्रस्थान करने के बाद, पौलुस उन विश्वासियों की आत्मिक उन्नति के प्रति तथा उनकी सतावट के प्रति चिन्तित था। अतः उसने तीमुथियुस को वहां भेजा ताकि वह उनका समाचार प्राप्त करे और उन्हें प्रोत्साहन प्रदान कर सके। तब पौलुस और सीलास एथेन्स से कुरिन्थुस गए। कुछ समय पश्चात थिस्सलुनीके के विश्वासियों से तीमुथियुस भेंट करके वापस आया और यह बताया कि वहां के विश्वासियों की हालत ठीक है। इस सुखद समाचार को पाने के बाद पौलुस ने थिस्सलुनीके के विश्वासियों को यह पत्री लिखी।

"पौलुस, सिलवानुस और तीमुथियुस की ओर से थिस्सलुनीकियों की कलीसिया को, जो पिता परमेश्वर और प्रभु यीशु मसीह में है: तुम्हें अनुग्रह और शांति मिले। हम अपनी प्रार्थनाओं में तुम्हें स्मरण करते हुए तुम सबके लिए परमेश्वर का सदैव धन्यवाद करते हैं" (प0 थिस्स0 1:1–2)। जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है, पौलुस और सीलास ने थिस्सलुनीके में सुसमाचार–प्रचार किया था। अब पौलुस उन्हीं "थिस्सलुनीकियों" की कलीसिया (बुलाए हुए लोगों) को जो "पिता परमेश्वर और प्रभु यीशु में हैं", पत्री लिख

रहा था। इससे यह संकेत मिलता है कि विश्वासियों का यह समूह मसीह में सुस्थापित एवं स्थिर था। वे अपने विश्वास के द्वारा परस्पर एकता में थे और उनका जीवन संसारी लोगों से भिन्न था। मसीह के साथ सह–क्रूसित होने की सच्चाई को पहचानते हुए, वे तमाम तरह की सतावट एवं अपने चहुंओर फैली अनैतिकता के बावजूद सच्चा ख्रीष्टीय जीवन व्यतीत करना चाहते थे।

" तुम्हें अनुग्रह और शांति मिले"। सच्चा अनुग्रह एवं शांति केवल परमेश्वर से मसीह द्वारा प्राप्त होता है। यद्यपि थिस्सलुनीके के इन विश्वासियों को उद्धार प्राप्ति के समय ईश्वरीय अनुग्रह एवं शांति मिल चुकी थी, किन्तु पौलुस की इच्छा यह थी कि वे परमेश्वर से प्राप्त अनुग्रह व शांति के अनुभव एवं ज्ञान में विकसित होते रहें। यह तभी संभव था जबकि वे मसीह के ज्ञान–समझ में बढ़ते रहें (दू0 पत0 3:18)। पौलुस कहता है कि उसने उनके लिए " परमेश्वर का सदैव धन्यवाद" किया। क्योंकि थोड़ी सी सुसमाचार शिक्षा के बाद वे घोर सतावट का शिकार होने पर अपने मसीही विश्वास में स्थिर बने रहे। यह तो सिर्फ ईश्वरीय अनुग्रह की ही देन थी। पौलुस यह अच्छी तरह से जानता था कि ऐसी परिस्थिति में प्रभु परमेश्वर ही उनका एकमात्र सच्चा आशा–भरोसा (सहारा) है और उनकी स्थिरता के लिए पौलुस भी परमेश्वर की ओर ही आस लगाए था।

" हम तुम्हारे विश्वासपूर्ण कार्य, प्रेमपूर्ण परिश्रम और अपने प्रभु यीशु मसीह में तुम्हारी आशा की दृढ़ता को अपने परमेश्वर और पिता के सम्मुख निरन्तर ध्यान में रखते हैं" (प0 थिस्स0 1:3)। थिस्सलुनीके के विश्वासी अपनी घोर सतावट के मध्य प्रभु पर विश्वास में स्थिर बने रहे (1:6; 3:1–4,7–8)। अतएव उनके " विश्वासपूर्ण कार्य", " प्रेमपूर्ण परिश्रम" तथा " प्रभु यीशु मसीह में आशा की दृढ़ता" के लिए पौलुस ने उनकी प्रशंसा किया। सबसे

पहले उसने उनके **विश्वास** को स्मरण किया। प्रभु यीशु पर उनका विश्वास भले कार्यों द्वारा प्रकट हो रहा था। किसी व्यक्ति का कार्य–व्यवहार उसके विश्वास का प्रमाण (फल) होता है। हमारा विश्वास कार्य (फल) में परिणित होता है। *"हे मेरे भाइयों, यदि कोई कहे कि मैं विश्वास करता हूँ, पर कर्म न करे, तो इस से क्या लाभ? क्या ऐसा विश्वास उसका उद्धार कर सकता है? यदि किसी भाई या बहन के पास कपड़े न हों और उन्हें प्रतिदिन के भोजन की आवश्यकता हो, और तुम में से कोई उनसे कहे, 'कुशल से चले जाओ, गरम और तृप्त रहो', पर उन्हें वह वस्तु न दे जो उनके शरीर के लिए आवश्यक है तो क्या लाभ? वैसे ही विश्वास भी, यदि उसके साथ कार्य न हो, तो अपने आप में मृतक है, परन्तु कोई कह सकता है, 'तुम विश्वास करते हो और मैं कार्य करता हूँ। तुम मुझे अपना विश्वास बिना कार्य के दिखाओ, और मैं अपना विश्वास तुम्हें अपने कार्यों द्वारा दिखाऊंगा"* (याकूब 2:14–18)।

इसके पश्चात पौलुस उनके "प्रेमपूर्ण परिश्रम" की ओर ध्यान आकर्षित करता है। विश्वास कार्य करता है और प्रेम परिश्रम करता है। **प्रेम** पवित्र आत्मा के फलों में से एक है, और चूंकि वह लोग प्रभु यीशु में सचमुच उद्धार पाए हुए लोग थे और पवित्र आत्मा के अधीन जीवन व्यतीत कर रहे थे, इसलिए उनका **प्रेम**, "परिश्रमपूर्ण" था (प0 कुरि0 13:4–7)। तत्पश्चात् उसने उनकी धैर्यपूर्ण **आशा** का उल्लेख किया। विश्वास कार्य करता है, प्रेम परिश्रम करता है और **आशा** धैर्य प्रदान करती है। थिस्सलुनीके के विश्वासी मसीह में अपनी आशा के प्रति आश्वस्त (कायल) थे – अर्थात् पाप एवं न्याय से छुटकारे के प्रति आश्वस्त तथा परमेश्वर के समक्ष निर्दोष यानि धर्मी ठहराए जाने के प्रति आश्वस्त। इसके साथ वे मसीह के पुनरागमन के प्रति भी कायल थे। इसीलिए तमाम

सतावटों के बावजूद वे धैर्यपूर्वक परमेश्वर में आस लगाए रहे और अपने **विश्वास** में अटल बने रहे। चूंकि प्रत्येक सच्चा विश्वासी दूसरों को विश्वास में प्रोत्साहन एवं शिष्यता प्रदान करने में किसी न किसी तरह योगदान देता है, अतएव हमें इस महत्वपूर्ण बात को ध्यान में रखना जरूरी है। हम सदैव लोगों को अपनी दृष्टि प्रभु परमेश्वर की ओर लगाने के लिए प्रोत्साहित करें (यशा0 26:3)। प्रभु यीशु ने जब अपने शिष्यों को यह बताया कि उसे गिरफ्तार किया जाएगा और क्रूस पर चढ़ा दिया जाएगा, तो वे यह सुनकर बहुत निराश हुए। तब उसने उन्हें यह बताकर प्रोत्साहित किया कि **वह** उनके लिए एक **सहायक** (शान्तिदाता) भेजेगा जो उनके साथ होगा, और वह स्वयं एक दिन उनके पास पुनः वापस आएगा (यूह0 14:1–3)।

"हे भाइयों, परमेश्वर के प्रियों, हम जानते हैं कि तुम उसके चुने हुए हो। क्योंकि हमारा सुसमाचार तुम्हारे पास न केवल शब्दों में, परन्तु सामर्थ्य में, पवित्र आत्मा में और पूर्ण निश्चयता के साथ भी पहुंचा। तुम्हारे मध्य और तुम्हारे लिए हम किस प्रकार के लोग प्रमाणित हुए, इसे तुम स्वयं जानते हो" (प0 थिस्स0 1:4–5)। अब चौथे पद की इस सच्चाई पर ध्यान दीजिए कि पौलुस ने उन्हें यह याद दिलाया कि परमेश्वर को उन्होंने नहीं चुना है, **परमेश्वर** ने उन्हें चुना है। थिस्सलुनीके में जब पौलुस ने सुसमाचार–प्रचार किया, तब पवित्र आत्मा ने उन लोगों को पौलुस के (ईश्वरीय) संदेश की सत्यता के प्रति कायल किया, और उन्होंने विश्वास किया तथा उद्धार पाए। यही बात हम में से प्रत्येक विश्वासी के बारे में सच है। हम किसी को विश्वास करने के लिए मजबूर नहीं कर सकते। हमारा भरोसा हमारे ज्ञान–बुद्धि एवं वाक्पटुता पर नहीं होना चाहिए। किसी के मन में सुसमाचार–संदेश की सत्यता के प्रति कायलियत पैदा करने की सामर्थ्य सिर्फ पवित्र आत्मा में है और इस

सम्बन्ध में हमारा भरोसा केवल उसी पर होना चाहिए। किसी व्यक्ति को उसके पापीपन के प्रति तथा उद्धारकर्ता के रूप में मसीह पर विश्वास करने की उसकी आवश्यकता के प्रति केवल पवित्र आत्मा ही कायल कर सकता है। प्रभु यीशु ने भी यही शिक्षा दी है (यूह0 16:8–11; रोमि0 1:16)। अतः निष्कर्ष यह है कि सुसमाचार शब्दों का समूह मात्र नहीं है। सुसमाचार में उद्धार की **सामर्थ्य** है। सुसमाचार के साथ अन्तर्वासी **पवित्र आत्मा** का दान है। इतना ही नहीं बल्कि सुसमाचार में मसीह के साथ शाश्वत काल व्यतीत करने की महान **सुनिश्चयता** भी सम्मिलित है।

"तुम वचन को बड़े क्लेश में, पवित्र आत्मा के आनन्द के साथ, ग्रहण करके हमारे तथा प्रभु के अनुकरण करने वाले भी बन गए" (प0 थिस्स0 1:6)। पवित्र आत्मा द्वारा थिस्सलुनीके के इन लोगों में सत्य के प्रति ऐसी कायलियत पैदा की गयी कि घोर उत्पीड़न के बावजूद उन्होंने परमेश्वर के वचन पर विश्वास किया और पौलुस तथा प्रभु यीशु मसीह के अनुयायी हो गए (प0 कुरि0 11:1)। दूसरों को प्रभु की ओर आने की प्रेरणा प्रदान करने वालों को इस बात पर ध्यान देना बहुत जरूरी है कि जब वे पवित्र आत्मा की अगुवाई में चलते हैं, तब उन्हें मसीह का अनुकरण करते हुए देखकर दूसरे लोग भी मसीह का अनुसरण करते हैं।

"फलतः मैसीडोनिया तथा अखाया के समस्त विश्वासियों के लिए आदर्श बन गए। क्योंकि तुम्हारे यहां से प्रभु के वचन की न केवल मैसीडोनिया तथा अखाया में धूम मच गई है, परन्तु परमेश्वर के प्रति तुम्हारा विश्वास सर्वत्र फैल गया है। अतः हमें कुछ कहने की आवश्यकता ही नहीं" (प0 थिस्स0 1:7–8)। पौलुस, सिलवानुस और तीमुथियुस पवित्र आत्मा के अधीन जीवन बिताने वाले लोग थे। उनके जीवन उदाहरण को देखकर थिस्सलुनीके के

विश्वासी भी **आत्मा** के अनुसार जीवन व्यतीत करने लगे। नतीजतन वहां के मसीही विश्वासी लोग अन्य मंडलियों के लिए एक साक्षी एवं उदाहरण हो गए। विरोध एवं उत्पीड़न के मध्य इन विश्वासियों की स्थिरता दूसरे बहुत से विश्वासियों के लिए एक सच्चा आदर्श बन गई। थिस्सलुनीके के ये विश्वासी अपने चहुंओर की कलीसियाओं के लिए अनुकरणीय उदाहरण हो गए थे। उनके 'विश्वास की चर्चा सर्वत्र फैल गई' थी। उनके इस सुदृढ़ विश्वास की ऐसी चर्चा फैल गई थी कि पौलुस को उनके बारे में कुछ बोलने की जरूरत ही नहीं पड़ी।

"वे स्वयं ही हमारे विषय में बताते हैं कि तुम्हारे मध्य हमारा कैसा स्वागत हुआ तथा तुम मूर्तियों को छोड़कर परमेश्वर की ओर कैसे फिरे कि जीवित और सच्चे परमेश्वर की सेवा करो, तथा स्वर्ग से उसके पुत्र अर्थात् यीशु के आगमन की प्रतीक्षा करो, जिसे उसने मृतकों में से जिला उठाया, और जो हमें आने वाले प्रकोप से बचाता है" (प0 थिस्स0 1:9–10)। इस प्रकार थिस्सलुनीके के विश्वासियों को पौलुस ने यह याद दिलाया कि सुसमाचार द्वारा उनके जीवन में पूर्ण परिवर्तन आ गया था। ईश्वरीय सत्य–संदेश के प्रति पवित्र आत्मा उनके जीवन में ऐसी सच्ची कायलियत लाया कि वे मूर्तिपूजा की ओर से जीवित प्रभु परमेश्वर की ओर मन फिराकर उसी की सेवा–आराधना में लग गए और उसके "पुत्र" के पुनरागमन की आशा में जी रहे थे।

दो

"अन्त में, हे भाइयों, हम तुम से प्रभु यीशु में निवेदन करते और तुम्हें समझाते हैं कि जैसे तुमने योग्य चाल चलने और परमेश्वर को प्रसन्न करने की शिक्षा पाई है – जैसा कि तुम सचमुच चलते भी हो– वैसे ही और भी अधिक बढ़ते जाओ। क्योंकि तुम जानते हो कि हमने प्रभु यीशु के अधिकार से तुम्हें कौन–कौन सी आज्ञाएं दी हैं" (प0 थिस्स0 4:1–2)। पौलुस यह चाहता था कि थिस्सलुनीके के विश्वासी परमेश्वर को प्रसन्न करने की जैसी शिक्षा पाए हैं उसी के अनुसार चलते रहें और ऐसे जीवन–आचरण में अधिकाधिक बढ़ते जाएं। अब प्रश्न यह है कि कोई विश्वासी जन परमेश्वर को प्रसन्न करने योग्य चाल कैसे चले? विश्वास के सहारे जीवन व्यतीत करते हुए (इब्रा0 11:6)। शारीरिकता तो परमेश्वर के विरुद्ध है। शारीरिकता के अनुसार (अर्थात् अविश्वास में) जीवन व्यतीत करते हुए परमेश्वर को प्रसन्न करना असम्भव है। इन्हीं पदों में विश्वास के आधार पर जीवन व्यतीत करने का एक कारण भी बताया गया है – ताकि "और अधिक बढ़ते जाओ" (गला0 4:19)।

"परमेश्वर की इच्छा है कि तुम पवित्र बनो, अर्थात् व्यभिचार से बचे रहो, कि तुम में से प्रत्येक व्यक्ति अपनी पत्नी को आदर और पवित्रता के साथ प्राप्त करना जाने, यह अन्यजातियों के समान कामुक होकर नहीं जो परमेश्वर को नहीं जानते" (प0 थिस्स0 4:3–5)। यहां पवित्रशास्त्र के शब्दों पर ध्यान दें: "परमेश्वर की इच्छा है कि तुम पवित्र बनो"। वास्तव में, **पवित्र होना** एक प्रक्रिया है, अर्थात् पवित्रीकरण की प्रक्रिया। स्वर्गिक जीवन हेतु तैयार किए जाने की यह पवित्रीकरण–प्रक्रिया प्रत्येक विश्वासी के

इस पार्थिव जीवन के अन्त तक चलती रहती है। इस प्रकार सभी विश्वासियों के लिए परमेश्वर की यह इच्छा है कि वे पवित्र हों और पवित्रता का (अर्थात् ईश्वरीय इस्तेमाल के लिए अलग किए हुए जैसा) जीवन व्यतीत करें। व्यभिचार या अन्य किसी पाप में जीवन न बिताएं। प्रत्येक विश्वासी को पवित्रता का जीवन जीना चाहिए और शरीर की अभिलाषाओं के अनुसार जीवन–आचरण नहीं करना चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं कि ऐसा पावन जीवन सिर्फ पवित्र आत्मा के चलाए चलने के द्वारा ही संभव है। *"इसी प्रकार तुम भी अपने आप को पाप के लिए मृतक परन्तु मसीह यीशु में परमेश्वर के लिए जीवित समझो। इसलिए पाप को अपने मरणहार शरीर में प्रभुता न करने दो, कि तुम उसकी लालसाओं को पूरा करो, और न अपने शरीर के अंगो को अधर्म के हथियार बनाकर पाप को सौंपो, परन्तु अपने आप को मृतकों में से जीवित जानकर अपने अंगो को धार्मिकता के हथियार होने के लिए परमेश्वर को सौंप दो। तब पाप तुम पर प्रभुता करने नहीं पाएगा, क्योंकि तुम व्यवस्था के अधीन नहीं, परन्तु अनुग्रह के अधीन हो"* (रोमियों 6:11–14)।

पवित्र आत्मा के चलाए चलना विश्वास के आधार पर होता है और इसकी शुरुआत मसीह के साथ हमारे पुराने मनुष्यत्व के सह–क्रूसित होने सम्बन्धी सच्चाई पर विश्वास करने से प्रारम्भ होती है। विश्वास के द्वारा इस सच्चाई को अपनाने पर हम अपनी शारीरिकता की दैनिक गुलामी से आजादी के अनुभव में प्रवेश करते हैं (गला0 5:16) । पवित्र आत्मा की अगुवाई में जब हम विश्वास द्वारा 'मसीह के साथ अपने पुराने मनुष्यत्व के सह–क्रूसित होने' की सच्चाई को अपनाना सीखने लगते हैं, तब **वह** (पवित्र आत्मा) इस सत्य को अपनाने में भी हमारी अगुवाई करेगा कि हमें एक नया स्वभाव प्रदान किया गया है और अब मसीह में हम एक **नई**

सृष्टि हैं (दू0 कुरि0 5:17)। परमेश्वर–कृत इन सच्चाईयों पर **विश्वास करना** ही हमारी प्रमुख भूमिका है; और इन सच्चाईयों को पवित्र आत्मा प्रदत्त सामर्थ्य एवं इच्छानुसार विश्वास द्वारा जितना अधिक हम अपनाते जाते हैं, उतना ही अधिक हमारी अन्तरात्मा प्रभु यीशु में लवलीन होती जाती है, और जितना अधिक हम प्रभु यीशु में लवलीन होंगे उतना ही उसके स्वभाव में ढलते जाएंगे (दू0 कुरि0 3:18)।

"इस बात में कोई भी अपने भाई का (के प्रति) अपराध न करे और न उसे ठगे, क्योंकि प्रभु इन सारी बातों का बदला लेने वाला है, जैसा कि हमने पहिले ही तुम्हें बतलाया तथा गम्भीरतापूर्वक चिताया भी था। क्योंकि परमेश्वर ने हमें अशुद्ध होने के लिए नहीं, परन्तु पवित्र होने के लिए बुलाया है। परिणामस्वरूप जो इसे अस्वीकार करता है, वह मनुष्य को नहीं वरन् परमेश्वर को अस्वीकार करता है, जो तुम्हें अपना पवित्र आत्मा देता है" (प0 थिस्स0 4:6–8)। पौलुस यह सिखा रहा है कि हम न तो अपने भाइयों को ठगें और न ही उनके साथ धोखा करें, क्योंकि ऐसे कार्यों के लिए परमेश्वर हमें अवश्य अनुशासित (प्रताड़ित) करेगा। परमेश्वर पूर्णतः विश्वसनीय है और इन सारी बातों का बदला लेता है (रोमियों 12:19)। **उसने** हमें अशुद्धता के लिए नहीं बुलाया है। हमें शारीरिकता की अभिलाषाओं के अनुसार जीवन जीने के लिए नहीं, बल्कि परमेश्वर के ज्ञान के अनुसार पवित्र जीवन जीने हेतु बुलाया गया है (दू0 पत0 1:3)। संत पौलुस यहां बिल्कुल स्पष्ट लिखता है कि इस परमेश्वर–प्रदत्त शिक्षा का इनकार व तिरस्कार करके मसीह में अपने **भाइयों** के साथ झूठ–फरेब करने वाला जन स्वयं परमेश्वर का तिरस्कार व अनादर करता है।

"अब भाईचारे के प्रेम के विषय में यह आवश्यक नहीं कि

कोई तुम्हें लिखे, क्योंकि एक दूसरे से प्रेम करना तुमने आप ही परमेश्वर से सीखा है। क्योंकि तुम सचमुच समस्त मैसीडोनिया के भाइयों के साथ ऐसा ही व्यवहार करते हो। परन्तु भाइयों, हम तुम से आग्रह करते हैं कि और भी बढ़ते जाओ" (प0 थिस्स0 4:9–10)। पौलुस कहता है कि उसे थिस्सलुनीके के विश्वासियों को एक दूसरे के प्रति प्रेमपूर्ण व्यवहार करने की शिक्षा देने की जरूरत नहीं दिखती, क्योंकि परमेश्वर उन्हें यह पहले से ही सिखा रहा है। प्रेम तो पवित्र आत्मा के फलों में शामिल है। जब हम पवित्र आत्मा के अधीन जीवन बिताते हैं तो **वह** हमें एक दूसरे की प्रेमपूर्ण देखरेख करना सिखाता है। थिस्सलुनीके की मंडली के विश्वासी लोग मैसीडोनिया के भाइयों के साथ प्रेमपूर्ण व्यवहार कर रहे थे, किन्तु पौलुस ने उन्हें इसमें और अधिक बढ़ते रहने का प्रोत्साहन दिया। लोगों को कितने प्रेम की आवश्यकता है, इसकी कोई सीमा नहीं है। हाँ, हमारे द्वारा प्रकट होने वाले प्रेम की सीमा हमारी आत्मिक अवस्था पर निर्भर करेगी। हम जितना ही अधिक शारीरिकता के अधीन होंगे उतना ही कम सच्चे प्रेमी होंगे, और जितना ही अधिक **आत्मा** के चलाए चलेंगे, उतना ही अधिक मसीह का प्रेम हमारे द्वारा प्रकट होता रहेगा।

"जैसी आज्ञा हमने तुम्हें दी है, तुम शांतिपूर्वक जीवन व्यतीत करने की आकांक्षा रखो, अपने काम से काम रखो और अपने हाथों से परिश्रम करो, जिस से बाहर वालों के साथ तुम उचित व्यवहार कर सको और तुम्हें किसी वस्तु का अभाव न रहे" (प0 थिस्स0 4:11–12)। ऐसा प्रतीत होता है कि थिस्सलुनीके की मंडली के कुछ विश्वासी आलसी जीवन अपना लिए थे, और अपनी भौतिक आवश्यकताओं (जीविका) के लिए दूसरों पर आश्रित होने लगे थे। यद्यपि उनके इस आलसीपन का कारण यहां स्पष्ट नहीं है, परन्तु

अगले अध्याय में प्रभु के पुनरागमन सम्बन्धी बातों के उल्लेख से इस बात की संभावना है कि किसी भी क्षण मसीह के पुनरागमन की प्रतीक्षा में वे स्वयं को काम–धन्धे से बिल्कुल अलग करके " बैठकर बाट जोहने " का रवैया अपना लिए थे। अतः पौलुस ने वहां के विश्वासियों को शांति व परिश्रम के साथ अपना काम–धन्धा करते हुए जीवन व्यतीत करने की सलाह दी ताकि अविश्वासियों के समक्ष वे अच्छी साक्षी बने रहें। जब हम शरीर के अनुसार जीवन बिताएंगे तब अविश्वासियों को हमारे जीवन और उनके जीवन में कोई भिन्नता नहीं दिखाई देगी। इसके विपरीत जब हम पवित्र आत्मा की अधीनता में जीवन व्यतीत करते हैं तब **वह** हमारे जीवन में तथा हमारे जीवन के द्वारा ख्रीष्ट–जीवन प्रदर्शित करता है जो अविश्वासियों के लिए नया, आकर्षक एवं वांछनीय होता है। पौलुस ने यह भी सिखाया कि विश्वास के सहारे जीने वाले अविश्वासी को कोई अभाव नहीं होगा क्योंकि पवित्र आत्मा ही प्रभु परमेश्वर की भली–भावती इच्छा के अनुसार जीवन बिताने की हमें सामर्थ्य व इच्छा प्रदान करता है। इतना ही नहीं, पवित्र आत्मा हमें हरेक परिस्थिति में ऐसी आत्मिक संतुष्टि प्रदान करता है जैसे कि हमें कोई अभाव या आवश्यकता ही नहीं है (फिलि0 2:13, 4:11–12)। शारीरिकता में जीवन व्यतीत करने पर हमारा हृदय कभी भी संतुष्ट नहीं रहता, सदैव और अधिक चाहने और पाने का अभिलाषी होता है। एक बार किसी बहुत धनी मनुष्य से यह पूछा गया कि कितना रुपया और पाने से वह संतुष्ट हो जाएगा। उसने उत्तर दिया, " केवल एक रुपया और मिल जाए "।

तीन

ऐसा प्रतीत होता है कि शायद थिस्सलुनीके की मंडली के कुछ विश्वासी यह मानने लगे थे कि प्रभु के पुनः वापिस आने पर केवल वही विश्वासी उसके साथ जायेंगे जो उस समय इस पृथ्वी पर दैहिक तौर पर जीवित होंगे। *"परन्तु हे भाइयों, हम नहीं चाहते कि तुम उनके विषय में अनभिज्ञ रहो जो सो गए हैं और अन्य लोगों के समान शोकित होओ जो आशारहित हैं"* (प0 थिस्स0 4:13)। संभवतः उस मंडली के कुछेक विश्वासी मर गये थे और इससे शेष लोग इतने शोकित थे जैसे कि उन मृतकों का 'पुनरुत्थान' नहीं होगा। यदि हमारा कोई (विश्वासी) मित्र या रिश्तेदार मर जाता है तो हम भी शोकित होते हैं, लेकिन यह आशा भी रखते हैं कि एक दिन स्वर्ग में हम फिर एक दूसरे से मिलेंगे। शरीर के अनुसार जीवन बिताने पर हम अहं–केन्द्रित होते हैं और अपने (मृतक) विश्वासी मित्र की अनुपस्थिति से दुखित व निराश होते हैं; लेकिन **आत्मा** के अनुसार जीवन बिताने पर हम उनकी मृत्यु के बावजूद आनन्दित रहते हैं कि वह मृतक (विश्वासीजन) स्वर्ग में है और एक दिन हम फिर मिलेंगे।

"हम विश्वास करते हैं कि यीशु मरा और जी भी उठा – इसलिए परमेश्वर उन्हें भी जो यीशु में सो गए हैं, उसके साथ ले आएगा" (प0 थिस्स0 4:14)। इस प्रसंग में पहला कुरिन्थियों की पुस्तक के पहले अध्याय के तीसवें पद के इस वाक्यांश को स्मरण करना सहायक सिद्ध होगा: "तुम मसीह यीशु में हो"। अब हम

" मसीह में " स्थापित कर दिए गये हैं, अर्थात् जैसा मसीह के साथ वैसा हमारे साथ। **वह** मरा; सैद्धान्तिक तौर पर (अर्थात पिता परमेश्वर की दृष्टि में) मसीह के साथ हम भी मरे। वह पुनः जीवित हुआ; सैद्धान्तिक तौर पर (अर्थात् परमेश्वर की दृष्टि में, आध्यात्मिक तौर पर) हम भी उसके साथ जीवित हुए और पिता परमेश्वर के दाहिनी ओर " मसीह में " विराजमान हैं। बहरहाल, एक दिन हम भी दैहिक तौर पर पुनः जीवित किए जायेंगे और एक नयी देह पायेंगे। अतः पहला थिस्सलुनीकियों के चौथे अध्याय के इस चौदहवें पद में पौलुस स्पष्ट कहता है कि " जो यीशु में सो गए हैं " उन्हें परमेश्वर " **उसके** साथ " लाएगा। जब किसी विश्वासी का देहान्त होता है तो उसकी देह से उसकी आत्मा का अलगाव हो जाता है। प्रभु यीशु के पुनः वापिस आने के समय ऐसे (विश्वासी) मृतकों का प्राण व आत्मा **उसके** साथ वापिस आकर उनकी पुनरुत्थान प्राप्त नई देह के साथ पुनः एक होगा।

" इस कारण हम प्रभु के वचन के अनुसार तुम से कहते हैं कि हम जो जीवित हैं और प्रभु के आने तक बचे रहेंगे, सोए हुओं से कदापि आगे न बढ़ेंगे। क्योंकि प्रभु स्वयं ललकार और प्रधान स्वर्गदूत की पुकार और परमेश्वर की तुरही की आवाज के साथ स्वर्ग से उतरेगा, और जो मसीह में मर गए हैं, वे पहिले जी उठेंगे। तब हम जो जीवित हैं और बचे रहेंगे उनके साथ हवा में प्रभु से मिलने के लिए बादलों पर उठा लिए जायेंगे। इस प्रकार हम सदैव प्रभु के साथ रहेंगे। " (प0 थिस्स0 4:15–17) यहां पौलुस साफ–साफ कहता है कि यह ' परमेश्वर के वचन के अनुसार ' है, अर्थात् प्रभु ने यही प्रकट किया है कि यह सब इसी प्रकार होगा। चूंकि प्रभु परमेश्वर ने कहा है, इसलिए यह सब इसी प्रकार घटित

होगा। हमें उस पर विश्वास एवं भरोसा रखना है कि परमेश्वर ने जैसे कहा है वैसे ही वह अपने वचन को पूरा करेगा। ध्यान दें कि स्वयं प्रभु यीशु अपने विश्वासियों के वास्ते पुनः वापिस आएगा। इससे उसके विश्वासियों के प्रति उसके प्रेम, लगाव एवं चिन्ता की अनुपमता जाहिर होती है। यदि वह चाहे तो हमें लेने के लिए किसी दूसरे को भेज सकता है, परन्तु इसके बजाय वह स्वयं अपने लोगों को लेने आएगा। समय पर उसकी पुकार को सिर्फ उसकी संतानें ही सुनेंगी और उसकी ओर उन्मुख होंगी। उद्धार–विहीन लोग उसकी पुकार को नहीं सुनेंगे और प्रत्युत्तर भी नहीं देंगे। पौलुस के कथनानुसार, उस समय तक जिन विश्वासियों का देहान्त हो चुका होगा, सर्वप्रथम वही पुनः जीवित होंगे; तत्पश्चात् उस समय जीवित विश्वासीगण उनके साथ " हवा में प्रभु से मिलने के लिए बादलों पर उठा लिए जायेंगे"। तब " हम सदैव प्रभु के साथ रहेंगे"। इससे आधिक हर्षोल्लासपूर्ण और क्या हो सकता है कि प्रभु के साथ सदा–सर्वदा तक रहने के लिए एक दिन हम सब विश्वासी उसके साथ होंगे।

" इसलिए इन बातों से एक दूसरे को शान्ति दिया करो " (प0 थिस्स0 4:18)। यहां पौलुस द्वारा लिखी गई यह बात मसीह में प्राप्त **आशा** के एक अन्य पहलू को दर्शाती है। हमें मसीह में प्राप्त इस (अद्वितीय) **आशा** के द्वारा एक दूसरे को शान्ति व प्रोत्साहन प्रदान करते रहना है। पवित्र आत्मा द्वारा चलाए जाने पर हमारी आशा–दृष्टि हमारी आशा के केन्द्र प्रभु यीशु पर केन्द्रित रहेगी। शरीर के अनुसार जीवन व्यतीत करने पर हम मसीह के बजाए अन्य चीजों की ओर आस लगाए रहते हैं।

चार

"अब हे भाइयों, इस बात की आवश्यकता नहीं कि समयों या कालों के विषय में तुम्हें कुछ लिखा जाय। क्योंकि तुम स्वयं भली–भांति जानते हो कि जैसे रात्रि में चोर आता है, वैसे ही प्रभु का दिन भी आएगा" (प0 थिस्स0 5:1–2)। "प्रभु का दिन" एक ऐसे भावी समय की ओर इशारा करता है जबकि परमेश्वर दंड और आशीष दोनों उंडेलेगा। थिस्सलुनीके की मंडली के लोग पहले से ही यह समझते थे कि "प्रभु का दिन" रात्रि में चोर की तरह आएगा, यानि एक ऐसे समय जब कोई इसकी उम्मीद नहीं करता। स्मरण रहे कि **प्रभु का दिन** केवल एक ही दिन नहीं होगा बल्कि एक नियतकाल (समयावधि) होगा। इस काल की शुरुआत तब होगी जब प्रभु यीशु अपने लोगों को इस संसार में से उठा लेने आएगा, और इस काल का अन्त तब होगा जब परमेश्वर सब कुछ नष्ट करके नई पृथ्वी और नये आकाश की रचना कर देगा। आगे अध्ययन करते रहने पर इस कालावधि के बारे में और जानकारी प्राप्त हो सकती है।

"जब लोग कह रहे होंगे, 'शांति और सुरक्षा है', तब जैसे गर्भवती स्त्री पर सहसा प्रसव पीड़ा आ पड़ती है, वैसे ही उन पर भी विनाश आ पड़ेगा और वे बच न सकेंगे।" (प0 थिस्स0 5:3)। "**प्रभु का दिन**" अविश्वासियों के लिए अत्यन्त विस्मयकारी होगा। नूह का समय इसका एक समुचित उदाहरण है। नूह के समय के लोग प्रभु परमेश्वर की चेतावनी पर विश्वास नहीं किए। वे अपनी मनमानी करते हुए स्वयं को सुरक्षित व सुखी समझने में ही मस्त रहे। लेकिन परमेश्वर का समय पूरा होने पर उसके द्वारा दी गई चेतावनी के अनुसार भीषण वर्षा होने लगी और महाजलप्रलय आया। सदोम और अमोरा के विनाश की घटना भी इसका एक उदाहरण पेश करती है। वहां के लोगों ने परमेश्वर की कार्य–योजना की ओर

बिल्कुल ध्यान नहीं दिया। वे अपनी मौज–मस्ती एवं अनैतिकता में लिप्त रहे। यहां तक कि लूत के दामाद ने भी अपने ससुर की चेतावनी को अनसुना किया और उसका ठट्ठा उड़ाया। वे लोग उसकी बात का विश्वास नहीं किए। अन्ततः वह दिन आया जबकि "आकाश से आग और गंधक की वर्षा" होने लगी। तब वे आश्चर्यचकित रह गये। यहां थिस्सलुनीके की पुस्तक में लिखा है कि "प्रभु का दिन" आने पर संसार के लोगों में इसी प्रकार की भावना होगी। लोग कहेंगे कि सब कुछ ठीक है, सब कुछ सुरक्षित व शांतिपूर्ण है। तब अचानक एक दिन ऐसा आएगा जबकि **कलीसिया** इस संसार से उठा ली जाएगी और सहसा विनाश आ जाएगा। संत पौलुस ने इस विस्मयकारी घटना को किसी स्त्री की उस प्रसव–पीड़ा समान बताया है जो अचानक शुरू हुयी हो।

"परन्तु भाइयों, तुम अंधकार में नहीं हो कि वह दिन तुम पर चोर के समान आ पड़े, क्योंकि तुम सब ज्योति की संतान और दिन की संतान हो। हम न तो रात्रि के और न ही अन्धकार के हैं" (प0 थिस्स0 5:4–5)। पौलुस कहता है कि विश्वासीजन अब "**अन्धकार**" में नहीं है। हम सत्य से अनभिज्ञ नहीं हैं। अब हमारे पास परमेश्वर के वचन का सत्य उपलब्ध है। हम परमेश्वर के वचन के अनुसार यह जानते हैं कि **उसने** जो कहा है वह अवश्य पूरा होगा। अतः "प्रभु का दिन" आने पर अविश्वासियों की तरह हम आश्चर्यचकित नहीं होंगे। क्या जल प्रलय देखकर नूह आश्चर्यचकित हुआ था? नहीं। परमेश्वर द्वारा उसे चेतावनी दी गई थी और उसने परमेश्वर की बात पर विश्वास किया था। क्या सदोम–अमोरा के विनाश को देखकर लूत को अचरज हुआ था? नहीं। उसे भी पहले से चेतावनी मिली थी, और विनाश आने पर उसे उस नगर से बाहर निकाला गया। नूह और लूत की भांति विश्वासी लोग प्रभु परमेश्वर को जानते हैं और उस पर एवं उसके सत्य वचन पर विश्वास करते हैं, तथा "प्रभु का दिन" आने पर विस्मित नहीं होंगे।

"अतः हम दूसरों के समान सोते न रहें, परन्तु सजग और सतर्क रहें, क्योंकि जो सोते हैं वे रात्रि में सोते हैं, और जो नशे में चूर होते हैं, वे रात्रि में ही होते हैं" (प0 थिस्स0 5:6–7)। यदि किसी व्यक्ति को इस बात की चेतावनी दी गई हो कि आज रात में उसके घर चोर घुसने वाला है, और शाम होने पर वह शराब पीना शुरू कर देता है और तब तक पीता रहता है जब तक कि नशे में चूर होकर सो नहीं जाता, तो क्या हम ऐसे जन को बुद्धिमान कहेंगे? बिल्कुल नहीं। अपनी शारीरिकता के अनुसार आचरण करने वाले लोग ऐसे ही होते हैं। ऐसे लोग प्रभु के पुनरागमन की बात को गम्भीरतापूर्वक नहीं लेते। इस प्रकार के लोग अन्धकार में चलने वालों के समान होते हैं और प्रभु के पुनः आगमन के समय वे हैरत में होंगे। इसके विपरीत, पवित्र आत्मा की अधीनता में जीवन व्यतीत करने वाले विश्वासी गम्भीर, संयमी एवं जागरूक होते हैं, और प्रभु के दिन के आगमन की आस लगाए रहते हैं। ऐसे विश्वासियों के मन में अविश्वासियों की आत्माओं के उद्धार के लिए बोझ होता है और वे उन्हें भी **प्रभु के दिन** की चेतावनी देते हैं।

"परन्तु इसलिए कि हम दिन के हैं, आओ, हम विश्वास और प्रेम का कवच तथा उद्धार की आशा का टोप पहिन कर सतर्क हों। क्योंकि परमेश्वर ने हमें प्रकोप के लिए नहीं, परन्तु हमारे प्रभु यीशु के द्वारा उद्धार प्राप्त करने के लिए ठहराया है, जो हमारे लिए मर गया कि चाहे हम जागते या सोते हों, हम सब मिलकर उसके साथ जीवित रहें। इसलिए एक दूसरे को प्रोत्साहित करो और एक दूसरे की उन्नति करो जैसा कि तुम कर भी रहे हो" (प0 थिस्स0 5:8–11)। जो लोग "दिन" के हैं, और परमेश्वर की ज्योति में जीवन जीते हैं; उनके जीवन–अस्तित्व का बिल्कुल भिन्न अभिप्राय होता है। पौलुस के अनुसार, प्रभु के दिन के प्रति गम्भीर एवं सतर्क लोग **विश्वास** एवं **प्रेम** रूपी कवच तथा उद्धार की **आशा** रूपी टोप धारण करके तैयार रहते हैं। विश्वास एवं प्रेम पवित्र आत्मा के फल

हैं। **आत्मा** के चलाए चलने पर हम विश्वास एवं प्रेम में जीवन जीते हैं, और हमारी अन्तरात्मा में ईश्वरीय प्रकोप से छुटकारे की सुनिश्चित आशा पाई जाती है। पौलुस के शब्दों पर ध्यान दें। हम परमेश्वर के प्रकोप के पात्र होने के लिए नहीं, बल्कि हमारे लिए मरने वाले प्रभु यीशु द्वारा उद्धार पाने के लिए चुने गए हैं। अतः प्रभु के पुनः आगमन के समय चाहे हम दैहिक तौर पर मर चुके हों या जिन्दा हों, सब विश्वासी परमेश्वर के प्रकोप से मुक्त होंगे और सदा–सर्वदा तक प्रभु यीशु के साथ होंगे।

स्मरण करें! प्रभु परमेश्वर ने जल–प्रलय भेजने से पूर्व नूह एवं उसके परिवार की सुरक्षा को सुनिश्चित किया। अपने न्याय–दंड अर्थात् उस जल–प्रलय से बचाने के लिए नूह तथा उसके परिवार के उस जहाज में प्रवेश करने के बाद, प्रभु परमेश्वर ने स्वयं उसका दरवाजा बन्द किया (उत्प0 7:16)। इसी प्रकार सदोम–अमोरा पर न्याय–दंड भेजने से पूर्व प्रभु परमेश्वर ने लूत एवं उसकी बेटियों को अपने दूतों के द्वारा शहर से बाहर निकाल कर बचाया। इस संसार का न्याय करने से पूर्व परमेश्वर **अपनी कलीसिया के लोगों** को भी निकाल लेगा ताकि हम संसार के न्याय–दण्ड से बचाए जाएं। चूंकि हमें इतने महान एवं अद्‌भुत उद्धार की सुनिश्चियता प्राप्त है, इसलिए एक–दूसरे को उत्साहित, प्रोत्साहित एवं सांत्वना देते रहना है। इसमें कोई संदेह नहीं कि यह संसार पाप में पतित, पाप के कारण स्रापित व निकृष्ट अवस्था में है, और इसमें जीवन व्यतीत करना बहुत कठिन है। परमेश्वर का वचन यह दर्शाता है कि इस दुनिया की दशा दिन–प्रतिदिन बिगड़ती ही जाएगी। परन्तु वह दिन भी आने वाला है जबकि इस पाप व दुख–दर्द भरी दुनिया से अपने लोगों को निकालने के लिए हमारा प्रेमी और दयालु उद्धारकर्ता पुनः वापिस आएगा। तब हम सदा–सर्वदा तक उसके पास होंगे।

पांच

संत पौलुस प्रायः अपनी पत्रियों के प्रारम्भ में विश्वासियों की मसीह में स्थापना एवं आशिष की याद दिलाता है – यानि मसीह में नये स्वभाव के साथ एक नई सृष्टि सम्बन्धी सच्चाईयों की याद। इस तथ्य को दर्शाने के बाद, वह यह समझता है कि ऐसे नये स्वभाव के अनुकूल विश्वासियों का जीवन–आचरण कैसा होना चाहिए। लोगों को शिक्षा देते समय हमें भी इस क्रम को ध्यान में रखना चाहिए। सर्वप्रथम हमें यह सिखाना है कि विश्वासीजन 'मसीह में' क्या है (अर्थात् मसीह में हमारी स्थापना एवं आशिष सम्बन्धी आत्मिक सच्चाईयां)। इसके बाद पवित्र आत्मा के चलाए चलने की बात और तत्पश्चात ख्रिष्तीय जीवन–आचरण।

"परन्तु भाइयों, हम तुमसे निवेदन करते हैं कि उनका आदर करो जो तुम्हारे मध्य कठिन परिश्रम करते हैं और जो प्रभु में तुम्हारे ऊपर नियुक्त हैं तथा तुम्हें शिक्षा देते हैं। और उनके कार्य के कारण प्रेमपूर्वक उनका अत्यन्त सम्मान करो। एक दूसरे के साथ मेल–मिलाप से रहो" (प0थिस्स0 5:12–13)। यहां पौलुस यह सिखा रहा है कि मंडली में सेवा–परिश्रम करने वाले अगुवों का आदर–मान करना है। प्रभु परमेश्वर ने कलीसिया के इन अगुवों को विश्वासियों की देखरेख, सुरक्षा व निगहबानी का दायित्व सौंपा है। इन्हें **आत्मा** के चलाए चलते हुए दूसरों की भी इसी दिशा में अगुवाई करनी है। संत पौलुस यह भी कहता है कि "प्रभु में तुम्हारे ऊपर नियुक्त" आत्मिक अगुवों का सम्मान करो। ये आत्मिक अगुवे प्रभु की इच्छा में हमारे मध्य शिक्षा देते एवं सेवा–परिश्रम करते हैं। आत्मिक अगुवों को अपनी (शारीरिक) ज्ञान–बुद्धि के अनुसार कलीसिया को कंट्रोल नहीं करना है। उन्हें परमेश्वर के समक्ष इस बात का हिसाब देना है कि उन्होंने परमेश्वर के वचन की सच्चाईयों के अनुसार मंडली को शिक्षा

एवं अगुवाई प्रदान किया है या नहीं। यहां पवित्र वचन से बिल्कुल स्पष्ट है कि हमारी आत्मिक भलाई हेतु सोपदेश, सलाह एवं चेतावनी देना आत्मिक अगुवों का अधिकार–दायित्व है। कहने का मतलब यह है कि सत्य में अगुवाई करने तथा **आत्मा** के अनुसार जीवन बिताने की ओर अग्रसर करने के उद्देश्य से मंडली के लोगों को शिक्षा, प्रशिक्षण, प्रोत्साहन, परामर्श, ढाढ़स, फटकार व चेतावनी देना अगुवों की जिम्मेदारी है (इब्रा0 13:7)। प्राचीनों या आत्मिक अगुवों के प्रति आदर–मान की बात समझाने के बाद पौलुस यह लिखता है कि 'मसीहियों को आपस में मेल–मिलाप (शांति)' से रहना है। यह कैसे सम्भव है? **आत्मा** के अनुसार जीवन–आचरण द्वारा। शांति (मेल–मिलाप) पवित्र आत्मा का फल है। **गलातियों** की पत्री के पांचवे अध्याय के उन्नीसवें–बीसवें पदों के अनुसार फूट व मतभेद **शरीर के काम** हैं। विश्वासियों द्वारा शारीरिकता के अनुसार जीवन–आचरण करने पर मंडली में मतभेद का सिर ऊँचा (बोलबाला) रहेगा। इसके विपरीत, आत्मा के अनुसार जीवन व्यतीत करने पर शांति, मेल–मिलाप व एकता की उन्नति होगी (रोमियों 12:10, 16–18, प0 कुरि0 1:10, इफि0 4:1–3)।

"हे भाइयों, हम तुमसे आग्रह करते हैं कि आलसियों को चेतावनी दो, कायरों को प्रोत्साहन दो, निर्बलों की सहायता करो, सब के साथ सहनशीलता दिखाओ" (प0 थिस्स0 5:14)। यहां पौलुस उन लोगों को चेतावनी देने की बात लिखता है जो 'अव्यवस्थित, अनियंत्रणीय, अशासनीय, उच्छृंखल, उत्तेजित, उपद्रवी या ठीक चाल नहीं चलने वाले' (आलसी) हैं। ऐसे लोग शारीरिकता में ही चलते हैं। ऐसे शारीरिक मसीहियों को यह चेतावनी एवं प्रोत्साहन देना है कि वे क्रूस की ओर नजर लगाकर अपने पुराने मनुष्यत्व को मरा हुआ समझें और प्रभु के साथ गहरी व स्थिर संगति में रहना सीखें। ध्यान दें कि इन पदों में सिर्फ अगुवों की बात नहीं की गई है, बल्कि सभी विश्वासियों के बारे में बात की

गई है। यदि हम किसी दूसरे विश्वासी को शारीरिकता में जीवन जीते देख रहे हैं, तो **गलातियों** की पत्री के छठवें अध्याय के पहले पद को ध्यान में रखकर ही उसके साथ पेश आना है। *"हे भाइयों, यदि कोई मनुष्य किसी अपराध में पकड़ा भी जाए तो तुम जो आत्मिक हो नम्रतापूर्वक उसे संभालो, परन्तु सतर्क रहो कि कहीं तुम भी परीक्षा में न पड़ जाओ"* (गला0 6:1)।

इसके बाद **कायरों** को ढाढ़स–प्रोत्साहन देने की बात लिखी है। ये हताश, निराश व अवसादग्रस्त लोग हैं जो परमेश्वर की महानता एवं मसीह में विश्वासियों को प्राप्त आत्मिक आशिषों को भूल बैठे हैं। ऐसे लोग प्रभु पर दृष्टि लगाना सीखने के बजाया इस जीवन की कठिनाइयों तथा समस्याओं की ओर ही देखते रहते हैं। (भज0 42)। ऐसे लोगों को ढाढ़स–प्रोत्साहन देते समय उन्हें परमेश्वर की भलाईयों का स्मरण कराना अत्यावश्यक है (रोमियों 2:4)। इस प्रकार उनके ध्यान–मन को मसीह की ओर लगाना आवश्यक है।

इसके पश्चात् पौलुस ने **निर्बलों** की सहायता करने की बात लिखी है। यह ऐसे लोग होते हैं जिनका विश्वास मजबूत नहीं है, और बड़ी आसानी से अविश्वास के सहारे जीने लगते हैं। यदि हम भी शारीरिकता के अधीन जीवन व्यतीत कर रहे हैं तो हम ऐसे लोगों के प्रति आलोचनात्मक एवं अनुचित रवैया ही अपनायेंगे। परन्तु पवित्र आत्मा के अधीन जीवन व्यतीत करने पर इस प्रकार के दुर्बल लोगों को प्रेम व सहानुभूति के साथ संभालते हुए सुस्थिर विश्वास की ओर बढ़ाना चाहेंगे।

आगे पौलुस यह सिखाता है कि "सब के साथ सहनशीलता" का व्यवहार करो। यहां फिर हमें यह नहीं भूलना है कि **धीरज** (सहनशीलता) पवित्र आत्मा का फल है। पवित्र आत्मा के चलाए चलने पर ही सब मनुष्यों के साथ धैर्यपूर्ण सहनशीलता दिखाना सम्भव है। यदि हम स्वयं शरीर के अनुसार जी रहे हैं तो दूसरे निराश–हताश लोगों के प्रति अनुचित दृष्टिकोण अपनायेंगे –

उनकी आलोचना करेंगे, उन्हें नीची दृष्टि से देखेंगे। इस प्रकार दुर्बल लोगों को हम अपनी तुलना में घटिया समझेंगे। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं, क्योंकि हमारी शारीरिकता का सबसे बड़ा फल स्व–धार्मिकता (आत्म–धर्माभिमान या मानुषिक धर्म–दंभ) ही हो सकता है। बहरहाल, हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि परमेश्वर हमारे प्रति कितना असीम धैर्य व सहनशीलता दर्शाता है। ख्रीष्ट–जीवन में हमें विकसित करने के पवित्र आत्मा के कार्य–पथ में हम बारम्बार व्यवधान खड़ा करते हैं। हम भी मसीही मार्ग में भूल–चूक करते हैं। लेकिन प्रभु हमारे प्रति सहनशीलता का व्यवहार करता है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए हम भी दूसरे दुर्बल लोगों के प्रति सहनशीलता दिखा सकते हैं।

"ध्यान रखो कि कोई बुराई के बदले किसी से बुराई न करे, परन्तु सर्वदा एक दूसरे की तथा सब लोगों की भलाई करने में प्रयत्नशील रहे' (प0 थिस्स0 5:15)। जब कोई चोट पहुंचा कर या अपमान करके हमें दुखित या नाराज करता है तो शारीरिक स्वभाव के अनुसार हम इसका प्रतिकार या बदला लेना चाहते हैं। परन्तु परमेश्वर अपनी संतानों से यह अपेक्षा नहीं करता। परमेश्वर यह चाहता है कि ऐसे वक्त हम रोमियों के छठवें अध्याय के छठवें पद पर ध्यान लगाकर अपने पुराने आदम–स्वभाव के क्रूसित होने तथा उसकी अधीनता से मुक्त होने की सच्चाई को स्मरण करें। तब पवित्र आत्मा हमारे जीवन (मन, इच्छा, भावना) को नियंत्रित करता है और दूसरों के प्रति हमारे व्यवहार को भी। **आत्मा** के चलाए चलने पर हमें उनके प्रति सहानुभूति, प्रेम व क्षमा–भावना की सामर्थ्य मिलती है जिन्होंने हमारे प्रति अपमानजनक व्यवहार किया है।

"सर्वदा आनन्दित रहो, निरन्तर प्रार्थना करो, प्रत्येक परिस्थिति में धन्यवाद दो, क्योंकि मसीह यीशु में तुम्हारे लिए परमेश्वर की यही इच्छा है। आत्मा को न बुझाओ। भविष्यवाणियों को तुच्छ न जानो। सब बातों को सावधानी से परखो; जो अच्छी है उसे

दृढ़तापूर्वक थामे रहो। सब प्रकार की बुराई से बचे रहो" (प0 थिस्स0 5:16–22)। यहां "सर्वदा आनन्दित" रहने की बात का सिर्फ यही अर्थ नहीं है कि 'आज का दिन ठीक–ठाक बीत गया कोई दुख–दर्द नहीं रहा, इसलिए आनन्दित होना है'। इस वाक्यांश का इससे भी गहरा भावार्थ है। जब हमारी परिस्थितियां ठीक–ठाक हैं तो आनन्दित रहना बड़ा आसान है। अविश्वासी लोग भी अपनी मनमर्जी के मुताबिक परिस्थिति में प्रसन्न रहते हैं। जीवन में जब बुरे दिन आते हैं या जीवन की परिस्थितियां जब अनुकूल नहीं होती हैं, तब हमारी प्रतिक्रिया कैसी होती है? यदि हम ऐसे मसीही हैं जो सुखद या अनुकूल परिस्थितियों में आनन्दित रहते हैं और कठिनाइयों या हालात खराब होने पर खुशी खो देते हैं, तब हम शारीरिकता के अनुसार जी रहे हैं और पवित्र आत्मा के द्वारा नियंत्रित होने के बजाय अपनी परिस्थितियों के गुलाम हो रहे हैं (इफि0 5:20)। इस संदर्भ में हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि **आनन्द** पवित्र आत्मा के फलों में से एक है। अतः पवित्र आत्मा के अधीन जीवन व्यतीत करने वाला प्रभु–भक्त अपनी इहलौकिक परिस्थितियों की दशा द्वारा नियंत्रित हुए बगैर हर हालत में "प्रभु में" आनन्दित रहता है (प्रेरि0 16:22–25)। शारीरिकता में हमारा आनन्द इहलौकिक या सांसारिक चीजों पर आधारित होता है। इसके विपरीत, **आत्मा** के अनुसार जीवन व्यतीत करने पर हमारा आनन्द मसीह के साथ हमारी संगति एवं 'मसीह में' हमारी स्थापना–आशिषों पर आधारित होता है (रोमियों 8: 35–39; 8:28–29)।

अब पौलुस की अगली बात पर ध्यान दें: "निरन्तर प्रार्थना करो"। प्रार्थना, परमेश्वर पर हमारे आश्रित रहने का परिणाम है। जिस परिमाण में हम अपने प्रभु परमेश्वर को जानते हैं, उसी परिमाण तक हम उस पर आशा–भरोसा करते हैं। बहरहाल, शारीरिक जीवन जीने पर हमारी दृष्टि अपनी ओर ही केन्द्रित रहेगी तथा परमेश्वर के बजाय हम इस संसार की अन्य चीजों या व्यक्तियों

पर आशा–भरोसा करते हैं (इफि0 6:18; यहूदा–20)। अट्ठारहवें पद में पौलुस यह लिखता है कि "प्रत्येक परिस्थिति में धन्यवाद दो, क्योंकि... परमेश्वर की यही इच्छा है"। यही पौलुस इफिसियों की पत्री में यह लिखता है: "सदैव सब बातों के लिए... परमेश्वर पिता को धन्यवाद दो" (इफि0 5:20)। जिस परिमाण में हम प्रभु को पहचानते हैं, उस परिमाण में **उसकी** सर्वोच्चता व सर्वोत्तमता (भलाई) पर इस बात का भरोसा रखेंगे कि वह जो कुछ करेगा, हमारी आत्मिक भलाई के लिए तथा अपनी महिमा के लिए करेगा (रोमियों 8:28–29) जैसे–जैसे हम अपने प्रति परमेश्वर की परमोत्कृष्ट भलाई के कायल होते हैं, वैसे–वैसे कठिनाईयों में निराशा या अविश्वास का शिकार होने के बजाय इस सच्चाई के प्रति आश्वस्त होते जाते हैं कि सारी परिस्थितियों का प्रयोग करते हुए परमेश्वर हमें मसीह के स्वभाव में ढाल रहा है। शरीर के अनुसार जीवन जीने पर हम उसकी भली–भावती इच्छा (सर्वोच्चता एवं सर्वोत्तमता) पर संदेह करते हैं और अपनी इच्छा के पीछे चलते हैं (यिर्म0 29:11)।

इसके बाद उन्नीसवें पद में पौलुस यह कहता है कि "आत्मा को न बुझाओ"। **आत्मा** को बुझाने का अर्थ अपने जीवन में **उसके** कार्य–प्रभाव का विरोध व दमन करना है। अपने जीवन में पवित्र **आत्मा** के कार्य में हम कैसे रुकावट करते हैं? **शरीर** के अनुसार जीवन व्यतीत करने के द्वारा। सत्य की शिक्षा, अगुवाई व रहनुमाई के लिए पवित्र आत्मा पर आश्रित रहने के बजाय हम अपनी शारीरिकता में अपने ज्ञान–बुद्धि के भरोसे सत्य को समझने की कोशिश करने लगते हैं। नतीजतन, सत्य के बारे में गलत सोच पैदा होती है और हमारा विश्वास भी गलत दिशा में होता है।

बीसवें पद में पौलुस यह कहता है कि "नबूवत (भविष्यवाणी) को तुच्छ न जानो"। पौलुस ने जब थिस्सलुनीके की मंडली को यह पत्री लिखी तब कलीसिया के लिए परमेश्वर की

सम्पूर्ण प्रकाशना (वर्तमान लिपिबद्ध वचन, बाइबॅल के रूप में) उपलब्ध नहीं थी। उस समय सत्य के प्रकटन हेतु पवित्र आत्मा ने कुछ खास लोगों को भविष्यवाणी का वरदान दिया था। उन दिनों सत्य–प्रकटन के लिए पवित्र आत्मा द्वारा इस्तेमाल किए जाने वाले ऐसे किसी व्यक्ति की अवहेलना करना **आत्मा** को "बुझाना" तथा उसके द्वारा सत्य–प्रकाशना में रुकावट करना माना जाता था। इसी बात को आज के संदर्भ में भी कहा जा सकता है। यद्यपि आजकल उस मायने में पवित्र आत्मा भविष्यवाणी का वरदान नहीं देता, तथापि अपने लोगों को सत्य जानने–समझने तथा इसकी शिक्षा देने का वरदान देता है। ऐसे लोगों की शिक्षा का तिरस्कार करना आत्मा द्वारा सत्य में हमारी अगुवाई करने में रुकावट पैदा करना या आत्मा को बुझाना है।

अब पौलुस की अगली बात पर ध्यान दें: "सब बातों को सावधानी से परखो; जो भली हों उन्हें दृढ़तापूर्वक थामे रहो"। चर्च के पास परमेश्वर के वचन की सम्पूर्ण प्रकाशना (लिपिबद्ध बाइबॅल के रूप में) उपलब्ध होने से पूर्व प्रभु परमेश्वर ने अपने नबियों (भविष्यवक्ताओं) के द्वारा सत्य की घोषणा (भविष्यवाणी) करायी। उन दिनों ऐसे लोग भी होते थे जो स्वयं को परमेश्वर के भविष्यवक्ता (नबी) तो कहते थे, किन्तु वे सत्य–शिक्षा नहीं देते थे। अतः थिस्सलुनीके के विश्वासियों को पौलुस ने यह परामर्श दिया कि उन्हें "सब बातों को" सावधानीपूर्वक परखना है और केवल सत्य को अपनाना है। आज भी यही बात लागू होती है। आज भी सत्य की सही शिक्षा देने वाले तथा गलत शिक्षा देने वाले अर्थात् दोनों प्रकार के लोग पाए जाते हैं (दू0 पत0 2:1–3)। अतः यह बहुत महत्वपूर्ण है कि प्रभु के विश्वासी **आत्मा** के चलाए चलें और सारी शिक्षाओं को परमेश्वर के वचन रूपी पैमाने पर परखें। यदि कोई शिक्षा परमेश्वर के लिपिबद्ध वचन के अनुसार नहीं है तो ऐसी शिक्षा को नहीं अपनाना चाहिए। शारीरिकता में जीवन जीने पर झूठी शिक्षाओं के

धोखे में आना बड़ा आसान होता है। इसके साथ ही बाईसवें पद में पौलुस यह कहता है कि "सब प्रकार की बुराई (बुराई के प्रत्येक रूप) से बचे रहो"। हमें सिर्फ बुराई से ही नहीं बचना है, बल्कि परमेश्वर की इच्छा है कि हम बुराई के प्रत्येक रूप (प्रकटन, आभास व दिखावे) से दूर रहें। केवल परमेश्वर के अनुग्रह से ही हम में ऐसा करने की शक्ति व इच्छा पैदा हो सकती है।

"अब शांति का परमेश्वर आप ही तुम्हें पूर्णतः पवित्र करे। और तुम्हारी आत्मा, प्राण और देह हमारे प्रभु यीशु मसीह के आगमन तक पूरी रीति से निर्दोष और सुरक्षित रहें" (प0 थिस्स0 5:23)। बाइबॅल में "पवित्र" शब्द का भावार्थ है – परमेश्वर की सम्पदा होने के लिए तथा उसी के द्वारा इस्तेमाल होने के वास्ते अलग किया जाना। सैद्धान्तिक तौर पर अर्थात् परमेश्वर की दृष्टि में हम उद्धार पाते ही **पवित्र** कर दिए गये, परन्तु व्यवहारिक तौर पर यह कार्य पवित्र आत्मा द्वारा हमारे दैनिक जीवन में प्रभावकारी (पूरा) किया जा रहा है। **वह** हमें **आत्मा** के चलाए जीवन व्यतीत करना सिखाता है जिससे कि हमारी वर्तमान अवस्था **मसीह में** हमारी स्थापना–आशिष के अनुरूप होती जाए। इस पवित्रीकरण या मसीह के स्वरूप में हमें ढालने की प्रक्रिया में पवित्र आत्मा अन्य बातों के अलावा कठिनाई, संघर्ष एवं दुख–दर्द भरे अनुभवों को भी इस्तेमाल करता है। जब तक हम पूर्णतः पवित्र आत्मा पर आशा–भरोसा रखकर जीना नहीं सीखते, तब तक मसीह के स्वभाव में विकसित नहीं होते, और पवित्र आत्मा पर आश्रित जीवन जीना हम तब तक नहीं सीखते, जब तक कि इस बात के कायल नहीं होते कि हम अपने ऊपर भरोसा करके आध्यात्मिक जीवन नहीं जी सकते। केवल कठिनाईयों, समस्याओं और संघर्षों के द्वारा ही हमें यह ज्ञान होता है कि आध्यात्मिक जीवन के लिए हम अपने ऊपर भरोसा नहीं कर सकते।

छः

(दूसरा थिस्सलुनीकियों)

ऐसा माना जाता है कि इस पत्री को संत पौलुस ने अपनी द्वितीय मिशनरी यात्रा के दौरान कुरिन्थुस से लिखा था। *"पौलुस, सिलवानुस तथा तीमुथियुस की ओर से थिस्सलुनीकियों की कलीसिया को, जो हमारे पिता परमेश्वर और प्रभु यीशु मसीह में है"* (दू0 थिस्स0 1:1)। इस पत्री को लिखते समय तीमुथियुस और सिलवानुस भी पौलुस के साथ थे। इस पत्री के प्रारम्भ में ही थिस्सलुनीकियों की कलीसिया को "पिता परमेश्वर और प्रभु यीशु मसीह में" बताया गया है। वे मसीह में स्थापित एवं स्थिर थे।

"पिता परमेश्वर और प्रभु यीशु मसीह की ओर से तुम्हें अनुग्रह और शांति मिले" (दू0 थिस्स0 1:2)। पौलुस ने प्रायः अपनी पत्रियों को "अनुग्रह एवं शांति" रूपी अभिवादन से शुरू किया है (रोमियों 1:7; प0 कुरि0 1:3; दू0 कुरि0 1:2; गला0 1:3; इफि0 1:2 इत्यादि)। पौलुस यह जानता था कि मसीहियों को कठिनाईयों व समस्याओं का सामना करना पड़ेगा, अतः वह विश्वासियों को यह याद दिला रहा था कि सच्चा अनुग्रह एवं सच्ची शांति सिर्फ परमेश्वर से मिलती है और केवल पवित्र आत्मा के चलाए चलने पर ही अनुभव की जा सकती है। शारीरिकता में जीवन जीने पर ईश्वरीय अनुग्रह व शांति का अनुभव नहीं हो सकता।

"भाइयों, तुम्हारे लिए तो हमें सर्वदा परमेश्वर का धन्यवाद करना चाहिए, और यह उचित भी है, क्योंकि तुम्हारा विश्वास बहुत

बढ़ गया है; और तुम में से हर एक का प्रेम परस्पर और भी बढ़ता जाता है। इसलिए परमेश्वर की कलीसियाओं में हम स्वयं भी तुम पर गर्व करते हैं कि जितनी यातनाएं व क्लेश तुम सहते हो उन सब में तुम्हारा धैर्य और विश्वास प्रकट होता है" (दू0 थिस्स0 1:3–4)। पौलुस ने जब कुरिन्थियों की कलीसिया को लिखा तब भी उसने अपनी पत्री को प्रोत्साहनपूर्ण शब्दों से आरम्भ किया; हालांकि उस मंडली के लोग शारीरिकता के चलाए चल रहे थे (प0 कुरि0 1:4–10)। अतः पौलुस थिस्सलुनीके के इन विश्वासियों के विश्वास, प्रेम और धैर्यपूर्ण सहनशीलता की सराहना करता है। वह स्पष्टता से कहता है कि परमेश्वर पर उनका विश्वास–भरोसा बढ़ता जा रहा है और एक–दूसरे के प्रति प्रेम भी।

रोमियों की पत्री के आठवें अध्याय के अट्ठाइसवें–उन्तीसवें पद में परमेश्वर ने पौलुस द्वारा यह वायदा किया है कि हमारे जीवन की प्रत्येक परिस्थिति को **वह** हमारी भलाई के लिए इस्तेमाल करेगा। थिस्सलुनीके की मंडली कठिनाई और यातना का सामना कर रही थी, लेकिन इसके कारण निराश, हताश एवं परमेश्वर से विमुख होने के बजाय परमेश्वर पर उनकी निर्भरता बढ़ती जा रही थी और एक दूसरे के प्रति प्रेमभाव भी।

हमारी आवश्यकताएं हमारे लिए अत्यावश्यक हैं। यदि थिस्सलुनीके के मसीही कठिन परिस्थिति में नहीं होते, तो परमेश्वर पर आश्रित होने के लिए विवश नहीं होते अर्थात् परमेश्वर पर आशा–भरोसा रखना नहीं सीखते और न ही विश्वास में उन्नति करते। यही बात हमारे लिए भी सच है। जब कठिनाईयां आती हैं; तब परमेश्र की कृपा से हम **उस** पर भरोसा करना सीखते हैं और दूसरों के प्रति प्रेम भी बढ़ता है।

इसके विपरीत शारीरिक जीवन व्यतीत करने वाले लोग कठिन परिस्थितियों में निराश हो जाते हैं और परमेश्वर पर आशा–भरोसा व विश्वास–विश्राम करने के बजाय उसके सर्वोच्च एवं सर्वोत्कृष्ट व्यवहार पर संदेह करते हैं। अपनी बात को सुस्पष्ट करते हुए पौलुस यह कहता है कि दूसरी कलीसियाएं थिस्सलुनीके की मंडली की साक्षी से अति उत्साहित थीं; क्योंकि वह इस बात का एक उत्तम उदाहरण थी कि कठिनाइयों एवं समस्याओं का इस्तेमाल करते हुए प्रभु परमेश्वर अपने लोगों को **उसी** पर आशा, भरोसा व विश्वास रखना सिखाता है (रोमियों 5: 1–5)। इसीलिए दूसरी कलीसियाओं के लिए थिस्सलुनीके की मंडली एक नमूना बन गई थी। हम भी अपनी शिक्षा–सेवा के समय प्रभु के आत्मा के अनुसार जीवन व्यतीत करने वाले प्रभु–भक्तों का उदाहरण दे सकते हैं।

"यह परमेश्वर के सच्चे न्याय का स्पष्ट संकेत है कि तुम परमेश्वर के राज्य के योग्य ठहराए जाओ, जिसके लिए तुम सचमुच दुख उठा रहे हो" (दू0 थिस्स0 1:5)। थिस्सलुनीके के विश्वासियों की आत्मिक उन्नति इस बात का प्रमाण थी कि उन्हें घोर कठिनाइयां सहन करने देने के सम्बन्ध में परमेश्वर का निर्णय सही था। चूंकि वे मसीह यीशु में ईश्वर–भक्ति का जीवन व्यतीत करने के लिए उत्सुक थे, इसलिए उन्हें सताया जा रहा था (दू0 तीमु0 3:12)। लेकिन इस सतावट के द्वारा प्रभु परमेश्वर ने उनके विश्वास को और मजबूत किया, तथा उन्हें **आत्मा** की अधीनता में जीवन व्यतीत करना सिखाया। जितना अधिक वे परमेश्वर पर आश्रित होकर पवित्र आत्मा के अनुसार जीवन बिताते, उतना ही अधिक उनके जीवन द्वारा पवित्र आत्मा के फल प्रकट होते, और इस प्रकार वे मसीह के स्वभाव में बढ़ते जाते। प्रत्येक विश्वासी के लिए प्रभु

परमेश्वर का यही उद्देश्य है – मसीह के स्वरूप में ढालना। यह प्रक्रिया हमारे उद्धार के समय शुरू होती है और जीवन भर चलती रहती है (रोमियों 8:29; दू0 कुरि0 3:18)। इस प्रक्रिया तथा इसमें लगने वाले समय के बारे में जानने–समझने पर हम दूसरे असफल विश्वासियों के प्रति प्रेम व सहनशीलता दर्शाते हैं, क्योंकि वे भी मसीह के स्वरूप में ढाले जाने की प्रक्रिया में हैं। शारीरिकता में होने पर हम उन लोगों की कड़ी आलोचना करते हैं जो अपने आत्मिक जीवन में संघर्ष से होकर गुजर रहे होते हैं; क्योंकि हम यह सोचते हैं कि उनमें और बेहतर ज्ञान एवं आचरण होना चाहिए। इसके विपरीत, जब हम **आत्मा** की अधीनता में जीवन जीते हैं तो इस सच्चाई को समझते हैं कि संघर्षपूर्ण एवं शारीरिक जीवन के द्वारा भी अपने लोगों की जिन्दगी में प्रभु परमेश्वर ईश्वरीय इच्छा–योजना पूर्ण करता है। चूंकि वह सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञानी, सबसे प्रेम रखने वाला तथा पूर्णतः विश्वसनीय परमेश्वर है; इसलिए हम अपने तथा अन्य लोगों के जीवन के बारे में उसकी सुइच्छा पर पूर्ण भरोसा रख सकते हैं (दू0 कुरि 5: 16)।

" क्योंकि परमेश्वर के लिए यह न्यायसंगत है कि जो तुम्हें क्लेश देते हैं, उन्हें बदले में क्लेश दे, और तुम क्लेश पाने वालों को हमारे साथ उस समय विश्राम दे जब प्रभु यीशु अपने सामर्थी दूतों के साथ, स्वर्ग से धधकती आग में प्रकट होगा, और जो परमेश्वर को नहीं जानते तथा जो हमारे प्रभु यीशु के सुसमाचार को नहीं मानते, उन्हें वह दंड दे। ऐसे लोग उस दिन प्रभु की उपस्थिति तथा उसकी शक्ति के प्रताप से दूर होकर अनन्त विनाश का दंड पाएंगे, जब वह अपने पवित्र लोगों में महिमा पाने और उन सब में जिन्होंने विश्वास किया है, आश्चर्य का कारण होने के लिए आएगा–

और तुम में भी, क्योंकि तुमने हमारी गवाही पर विश्वास किया।" (दू0 थिस्स0 1:6–10) यद्यपि यातना व उत्पीड़न के द्वारा प्रभु परमेश्वर अपने लोगों के जीवन में भलाई (आत्मिक उन्नति) ही उत्पन्न कर रहा था, तथापि इसका मतलब यह नहीं था कि उनको यातना देने वालों की **वह** अनदेखी करेगा। यहां पौलुस के द्वारा परमेश्वर का यह वचन है कि विश्वासियों का उत्पीड़न करने वालों को एक दिन दंडित किया जाएगा।

प्रभु यीशु जब पहली बार (देहधारी होकर) इस धरती पर आया तो सब लोगों का उद्धारकर्ता होकर आया; परन्तु अगली बार जब आएगा तो सर्वसामर्थी न्यायकर्ता (जज) होकर आएगा और सुसमाचार पर विश्वास करने से इनकार करने वालों को न्याय–दंड देगा। प्रभु यीशु का यह आगमन रैपट्युॲर (Rapture) नहीं होगा, जबकि वह अपनी संतानों को लेने आएगा। रैप्टयुॲर के समय, "जो मसीह में मर गए हैं", वह "प्रभु से मिलने के लिए बादलों पर उठा लिए जाएंगे"। उस समय **वह** धरती पर नहीं उतरेगा।

बहरहाल, एक दिन ऐसा भी आने वाला है जबकि मसीह अपने सामर्थी स्वर्गदूतों एवं सभी संतों के साथ इस धरती पर पुनः अवतरित होगा। उस समय, जबकि प्रभु यीशु अपनी कलीसिया के साथ इस धरती पर अवतरित होगा, उस पर विश्वास करने वाले उसकी महिमा, महानता एवं अनुपमता को देखकर अत्यन्त आश्चर्यचकित होंगे, और उसकी स्तुति–उपासना करेंगे (1:10)।

"इसी उद्देश्य से हम सर्वदा तुम्हारे लिए प्रार्थना भी करते हैं कि हमारा परमेश्वर तुम्हें अपनी बुलाहट के योग्य समझे, तथा भलाई की हर एक इच्छा को और विश्वास के हर एक कार्य को सामर्थ्य सहित पूरा करे, जिससे कि हमारे परमेश्वर और प्रभु यीशु

मसीह के अनुग्रह के अनुसार हमारे प्रभु यीशु का नाम तुम में महिमा पाए, और तुम उसमें" (दू0 थिस्स0 1:11–12)। यह तो प्रभु परमेश्वर की सुइच्छा एवं हमारे प्रति उसकी भलाई ही है कि वह अपनी संतानों को मसीह के स्वभाव में ढाल रहा है (इब्रा0 13 : 20–21)। अतः पौलुस की यही प्रार्थना थी कि परमेश्वर इस प्रक्रिया को जारी रखे ताकि हमारे जीवन में मसीह का जीवन (स्वभाव) अधिकाधिक भरता व खिलता जाए (रोमियों 8:28–29)। परमेश्वर के लोगों में जितना अधिक ख्रीष्ट–स्वभाव परिलक्षित होता है उतनी ही उनके द्वारा मसीह की महिमा होती है। यह पवित्र आत्मा का कार्य है : (1) मसीह की ओर हमारी दृष्टि लगाना, (2) मसीह के जीवन–स्वभाव से हमें भरपूर करना, (3) तथा मसीह को महिमान्वित करना। पौलुस कहता है कि चूंकि हम मसीह में हैं, इसलिए हमारे जीवन में मसीह महिमान्वित होगा, और इसके फलस्वरूप उसमें हम भी महिमान्वित होंगे। यह सब परमेश्वर के अनुग्रह से है।

मूलतः हम पापी थे, परमेश्वर के शत्रु थे, नरक में अनन्त दंड के लायक थे और परमेश्वर से स्थायी तौर पर अलग थे (इफि0 2:11–12)। इस आशाविहीन अवस्था से प्रभु परमेश्वर ने अपने प्रेम व अनुग्रह के कारण हमें बचाया, अपनी संतान बनाया, अपनी धार्मिकता से विभूषित किया, मसीह के साथ सह–वारिस बनाया, अपने समक्ष स्वीकार्य तथा स्वर्ग के योग्य बनाया। इतना ही नहीं, बल्कि अपने "एकलौते पुत्र" प्रभु यीशु मसीह की महिमा में सहभागी बनाया है। यही परमेश्वर का **अनुग्रह** है (इफि0 1:3–7)।

सात

पौलुस द्वारा थिस्सलुनीकियों के नाम पहली पत्री लिखने के कुछ ही समय पश्चात् इस दूसरी पत्री के लिखे जाने का कारण यहां स्पष्ट है। ऐसा प्रतीत होता है कि थिस्सलुनीके के विश्वासी गलत शिक्षा द्वारा भ्रमित हो रहे थे। *"हे भाइयों, अब हम तुमसे अपने यीशु मसीह के आगमन और उसके पास अपने एकत्र होने के सम्बन्ध में निवेदन करते हैं, कि तुम किसी आत्मा, वचन या ऐसे पत्र के द्वारा जो मानो हमारी ओर से यह प्रकट करता हो कि प्रभु का दिन आ गया है, अपने मन में विचलित न होना, और न घबराना"* (दू0 थिस्स0 2:1–2)।

पहला थिस्सलुनीकियों के अध्ययन से रैप्टयुॲर के बाद की घटनाओं की जानकारी प्राप्त होती है। सुसमाचार प्रचार पर विश्वास करने से इनकार करने वालों पर सात वर्ष तक ईश्वरीय प्रकोप एवं न्याय उंडेला जाएगा। चूंकि थिस्सलुनीके की मंडली बड़ी सतावट और कठिनाईयों का सामना कर रही थी, इसलिए वह लोग यह सोचने लगे थे कि (शायद) रैप्टयुॲर हो चुका है और वे क्लेशकाल के अनुभव में हैं। उनका यह भ्रम पौलुस के लिए चिन्ता का विषय था। अतः दूसरे पद में वह स्पष्ट कहता है कि उन्हें इस भ्रम में नहीं पड़ना है कि रैप्टयुॲर हो चुका है और क्लेशकाल आ गया है। इसीलिए इसके बाद पौलुस ने क्लेशकाल के प्रमाण (चिन्हों) के बारे में लिखा है।

"कोई तुम्हें किसी भी तरह धोखा न देने पाए, क्योंकि वह दिन उस समय तक न आएगा जब तक कि पहिले धर्म का परित्याग न हो और पाप–पुरुष अर्थात् विनाश का पुत्र प्रकट न हो जाए" (दू0 थिस्स0 2:3)। ईश्वरीय प्रकोप व न्याय–दंड के इस

क्लेशकालीन समय के आने से पहले परमेश्वर से विमुखता अर्थात् धर्म–परित्याग का बोलबाला होगा। यह बात चर्च के सम्बन्ध में कही गई है, न कि अन्य लोगों के बारे में, क्योंकि अविश्वासी लोग तो पहले से ही परमेश्वर को **त्याग** चुके हैं। कलीसिया द्वारा **धर्म–त्याग** या परमेश्वर से विमुखता की बात का अर्थ है : सत्य का परित्याग व इनकार; और इसके फलस्वरूप सत्य–शिक्षा से दूर जाने (धर्म–त्याग) का रास्ता तैयार व आसान हो जाता है। बहुत से लोगों का मानना है कि क्लेशकाल आने के समय कलीसिया द्वारा सुसमाचार की सच्चाईयों तथा आत्मिक उन्नति सम्बन्धी सच्चाईयों का परित्याग किया जाएगा।

पहला थिस्सलुनीकियों की पत्री में पौलुस ने यह कहा कि "आत्मा को न बुझाओ"। रोमियों की पुस्तक के छठवें अध्याय की सच्चाई को हमारे पवित्रीकरण का आधार मानने से इनकार करना तथा शारीरिकता एवं अपनी सामर्थ्य द्वारा ख्रीष्टीय जीवन व्यतीत करने की कोशिश करना, "आत्मा को बुझाना" है; और इस प्रकार अन्ततः हम परमेश्वर से विमुख होते हैं (यिर्म0 17:5–6)।

तत्पश्चात् पौलुस ने "पाप–पुरुष" (**विनाश** का पुत्र या विधर्मी) के प्रकट होने को क्लेशकाल के आगमन की एक पहचान बतायी है। इस संक्षिप्त अध्ययन में इस व्यक्ति के बारे में विस्तृत विचार नहीं किया जा रहा है, लेकिन **प्रकाशितवाक्य** नामक बाइबॅल–पुस्तक के अध्ययन से इस व्यक्ति के बारे में और अधिक जानकारी प्राप्त की जा सकती है। यहां इतना कहना ही पर्याप्त है कि यह वह व्यक्ति होगा जो उस समय एक बहुत ताकतवर तानाशाह के रूप में इस संसार के दृश्य–पटल पर सत्तासीन होगा और सारे संसार के लोग उसके अधिकार व नेतृत्व को स्वीकार करते हुए उसके अधीन होंगे। शैतान की ओर से उसे ऐसी शक्ति मिलेगी कि वह इस संसार के लोगों को धोखे व भ्रम में करके उन

पर शासन करेगा। शैतान इस सच्चाई को भली–भांति जानता है कि सारे जगत को नेतृत्व प्रदान करने वाले लीडर के रूप में, परमेश्वर द्वारा नियुक्त अपने अधिकृत स्थान (सिंहासन) को ग्रहण करने हेतु, प्रभु यीशु मसीह एक दिन पुनः आने वाला है। इसलिए शैतान इस संसार के लिए अपना एक लीडर खड़ा करके ईश्वरीय इच्छा–योजना के मार्ग में व्यवधान खड़ा करना चाहता है। **प्रकाशितवाक्य** की पुस्तक में इसी व्यक्ति को 'ख्रीष्ट–विरोधी' या ईश–निन्दक कहा गया है (प्रका0 13:1–8)।

ध्यान दें कि दूसरा थिस्सलुनीके की पत्री के दूसरे अध्याय के तीसरे पद में इस परमेश्वर–विरोधी तानाशाह को "पाप–पुरुष" कहा गया है। क्यों? क्योंकि वह शैतान के अधीन होगा, परमेश्वर के विरुद्ध रहेगा और संसार के लोगों की परमेश्वर के वचन के विरुद्ध अगुवाई करेगा। इसके साथ ही साथ "विनाश का पुत्र" भी कहा गया है। क्योंकि वह ऐसा ही होगा, और इसी के अर्थात् विनाश के ही लायक होगा। परमेश्वर एक दिन नयी पृथ्वी और नये आकाश की रचना करके मसीह को सर्वोच्च लीडर (प्रशासक) स्थापित करेगा। ऐसी ईश्वरीय योजना के विरुद्ध अर्थात् परमेश्वर के वचन और उसकी भली–भावती इच्छा के विरुद्ध काम करने का दुस्साहस करने वाला व्यक्ति अपने विनाश का आदेश स्वयं पारित कर चुका है।

"जो तथाकथित ईश्वर या पूज्य कहलाने वाली प्रत्येक वस्तु का विरोध करता और अपने आप को उन सब से ऊँचा ठहराता है, यहां तक कि वह परमेश्वर के मंदिर में बैठकर स्वयं को ईश्वर प्रदर्शित करता है" (दू0 थिस्स0 2:4)। ख्रीष्ट–विरोधी की जड़ शैतान में है, जो स्वयं परमेश्वर के अधिकार को हड़पना चाहता था (यशा0 14:12–14)। पौलुस कहता है कि यह "**पाप–पुरुष**" भी स्वयं को परमेश्वर से ऊंचा प्रदर्शित करते हुए लोगों से अपनी पूजा–आराधना

कराएगा। बाइबॅल के अनुसार, उस समय, यहूदी लोग अपने मंदिर का पुनर्निर्माण कर लिए होंगे। तब, यह **पाप–पुरुष** उस मंदिर में बैठने का दुस्साहस करते हुए लोगों से ईश्वर–तुल्य अपनी पूजा–आराधना कराएगा।

" क्या तुम्हें स्मरण नहीं कि जब मैं तुम्हारे साथ था, तब ये बातें तुम्हें बताया करता था? तुम तो जानते हो कि अपने ही समय में प्रकट होने के लिए अभी उसे क्या रोके हुए है" (दू0 थिस्स0 2:5–6)। अतः थिस्सलुनीके की मंडली को पौलुस ने समरण कराया कि उनके मध्य रहते हुए इन सच्चाईयों की शिक्षा उसने पहले भी दी थी। झूठे शिक्षकों के आने पर थिस्सलुनीके के विश्वासी भ्रमित हो गए थे (दू0 पत0 2:1–2)। उन्हें छठवें पद में पौलुस ने यह भी याद दिलाया कि वे जानते हैं कि ख्रीष्ट–विरोधी को संसार के सर्वोच्च (तानाशाह) शासक के रूप में सत्तासीन करने से शैतान को क्या रोके हुए है। पवित्र आत्मा ही शैतान पर रोक लगाए हुए है। परमेश्वर जब तक अपनी संतानों को इस संसार से नहीं निकाल लेता, तब तक शैतान को ऐसा नहीं करने देगा। जब परमेश्वर अपने विश्वासियों को यहां से निकाल लेगा और इस धरती पर पवित्र आत्मा द्वारा नवजीवन पाए उसके लोग नहीं रह जाएंगे, तब मार–काट, बर्बादी व विनाश करने के वास्ते ख्रीष्ट–विरोधी (पाप–पुरुष) का स्वच्छन्द राज–काज शुरू हो जाएगा।

" क्योंकि अधर्म का रहस्य अभी भी कार्यशील है, और जब तक रोकने वाला हटा न दिया जाए तब तक वह उसे रोके रहेगा" (दू0 थिस्स0 2:7)। संत पौलुस ने वर्तमान संसार में बुराई (अधर्म) के अस्तित्व को एक 'रहस्य' बताया है। यह रहस्य क्या है? अधिकार के प्रति विद्राह करने का गुप्त सिद्धान्त – अर्थात् गलत काम (बुराई) करने की एक प्रबल आंतरिक अभिलाषा। यह संसार पाप में जितना अधिक डूबता जाएगा, हालात उतने ही अधिक

बद्तर होते जाएंगे, और इसके दुष्परिणाम भी उतने ही बुरे होंगे। संसार अपने ऊपर न्याय–दंड को स्वयं बुला रहा है। बुराई या दुष्टता परमेश्वर की अनुमति व इच्छानुसार ही उपस्थित है; लेकिन वह दिन आने वाला है जबकि इस पृथ्वी पर से प्रभु परमेश्वर अपनी कलीसिया और पवित्र आत्मा को हटा लेगा। तब बुराई के ऊपर से उसकी लगाम हट जाएगी और बुराई को अपना पूरा बिगाड़ व बर्बादी फैलाने की अनुमति होगी। इस धरती पर से परमेश्वर की कलीसिया और पवित्र आत्मा के हटा लिए जाने के बाद, (प्रकाशितवाक्य की पुस्तक के अनुसार) शैतान और ख्रीष्ट–विरोधी को सात साल तक राज करने की ईश्वरीय अनुमति होगी। इस सात वर्षीय राज–काज को ही क्लेशकाल कहा जाता है। इस अवधि की समाप्ति के बाद अविश्वासियों के न्याय–दंड के लिए प्रभु यीशु मसीह अपने सामर्थी स्वर्गदूतों एवं कलीसिया के साथ इस पृथ्वी पर पुनः वापिस आएगा।

"तब वह अधर्मी प्रकट किया जायेगा जिसे प्रभु अपने मुंह की फूंक से ही मार डालेगा और अपने आगमन के तेज से भस्म कर देगा" (दू0 थिस्स0 2:8)। परमेश्वर का वचन सर्वसामर्थी है (भज0 29:4)। उसने अपनी वाणी से पृथ्वी और आकाश को रचा, और उसके वचन या "फूंक" मात्र से ही इस ख्रीष्ट–विरोधी दुष्ट को भस्म (नष्ट) किया जाना है (प्रका0 19:21)। प्रभु परमेश्वर का आदेश होते ही वह दुष्ट इस धरती पर से हटाकर सदा–सर्वदा के लिए नरक में डाल दिया जायेगा। पौलुस यह भी लिखता है कि वह दुष्ट जन प्रभु के 'आगमन या उपस्थिति के तेज' से नष्ट कर दिया जाएगा। तात्पर्य यह है कि मसीह की पवित्रता एवं शुद्धता रूपी तेज ख्रीष्ट–विरोधी को नष्ट कर देगा। जरा स्मरण करें कि दमिश्क के समीप जब पौलुस के 'चारों ओर परमेश्वर की ज्योति चमकी' तब क्या हुआ? वह मृतक समान भूमि पर गिर पड़ा (प्रेरि0 9:1–4)।

कुछ लोग अपनी बातों से ऐसा आभास देते हैं जैसे कि शैतान एवं उसकी दुष्टात्माएं इतनी शक्तिशाली हैं कि परमेश्वर तथा उसके स्वर्गदूतों के साथ वे युद्ध करने में समर्थ हैं, और विश्वासियों को प्रार्थना करनी चाहिए कि परमेश्वर की इच्छा–योजना शैतान द्वारा बाधित न हो। (यह सच नहीं है)। परमेश्वर ने ऐसा कुछ नहीं रचा है जिसे वह नियंत्रित नहीं कर सकता। शैतान उतना ही कर सकता है जितना सर्वसत्तासम्पन्न परमेश्वर, ईश्वरीय उद्देश्यपूर्ति के लिए, उसे करने की अनुमति देता है (प्रेरि0 4:26–28)। जब परमेश्वर का समय आ जाएगा, तब मसीह का पुनरागमन होगा और उसकी पवित्रता की चमक तथा उसके वचन की सामर्थ्य द्वारा ख्रीष्ट –विरोधी एवं शैतान के षडयंत्र एवं योजनाओ ंका पूर्णरूपेण सत्यानाश होगा। अतः यह सोचना मूर्खता है कि परमेश्वर की इच्छा–योजना को पूरा होने को शैतान रोक सकता है।

" उस अधर्मी का आना नाश होने वालों के लिए, शैतान की गतिविधि के अनुसार सम्पूर्ण सामर्थ्य, चिन्हों, झूठे आश्चर्यकर्मों और दुष्टता के हर धोखे के साथ होगा, क्योंकि उन्होंने सत्य के प्रेम को ग्रहण नहीं किया कि उनका उद्धार हो। इसी कारण परमेश्वर उन पर भरमाने वाले सामर्थ्य को भेजेगा कि वे झूठ की प्रतीति करें, जिससे कि वे सब जिन्होंने सत्य की प्रतीति नहीं की परन्तु दुष्टता में मग्न रहे, दंड पाएं" (दू0 थिस्स0 2:9–12)। यहां पौलुस यह बता रहा है कि 'ख्रीष्ट–विरोधी' किस प्रकार सत्ता में आएगा। उसके काम का तौर–तरीका भी शैतान जैसा ही होगा। उसमें चिन्ह–चमत्कार व आश्चर्यकर्म करने की क्षमता होगी और झूठ–फरेब एवं धोखेबाजी के द्वारा दुनिया वालों को अपने जाल में फंसाकर अपना अनुयायी बनाएगा। संसार के लोगों को अपने धोखे में फंसाने में 'ख्रीष्ट–विरोधी' की सफलता का वास्तविक कारण दसवें पद में बताया गया है – क्योंकि "उन्होंने **सत्य** के प्रेम **को ग्रहण नहीं किया** कि उनका उद्धार हो"। चूंकि उन्होंने सत्य को अस्वीकार

किया है, इसलिए **ख्रीष्ट–विरोधी** के राज्य–काल में परमेश्वर उन्हें अंधा होने देगा, तथा ख्रीष्ट–विरोधी की धोखाधड़ी का शिकार होने देगा और अन्ततः उसके साथ दंडित होने देगा। पौलुस कहता है कि सुसमाचार के सत्य को पहले से ही अस्वीकार कर चुके ऐसे लोग **ख्रीष्ट–विरोधी** के आश्चर्यकर्मों एवं उसके झूठ–फरेब के धोखे को ही मानेंगे।

"परन्तु भाइयों, प्रभु के प्रियों हमें तुम्हारे लिए सर्वदा परमेश्वर का धन्यवाद करना चाहिए, क्योंकि परमेश्वर ने आरम्भ ही से तुम्हें चुन लिया है कि आत्मा के द्वारा पवित्र बनकर और सत्य पर विश्वास करके उद्धार पाओ, जिसके लिए उसने हमारे सुसमाचार के द्वारा तुम्हें बुलाया कि तुम हमारे प्रभु यीशु की महिमा को प्राप्त कर सको" (दू0 थिस्स0 2:13–14)। परमेश्वर की संतानों के लिए बिल्कुल भिन्न आशिषें हैं, और पौलुस चाहता था कि इस तथ्य से थिस्सलुनीके की मंडली प्रोत्साहित होती रहे। बेशक, संसार धोखा खाएगा और दंड का भागी होगा; परन्तु सत्य पर विश्वास तथा (पवित्र) **आत्मा** के पवित्रीकरण–कार्य द्वारा प्रभु परमेश्वर ने सृष्टि के आरम्भ से ही अपनी संतानों को चुन लिया है। पवित्र आत्मा जब सत्य के प्रति हमारी अन्तरात्मा में कायलियत पैदा करता है तभी हम सत्य पर सच्चा विश्वास करते हैं और इसके द्वारा पवित्र किए जाते हैं। कितना सुखद संदेश कि सुसमाचार के द्वारा प्रभु परमेश्वर ने अपनी संतानों को मसीह की महिमा में सहभागी होने के लिए बुलाया है; संसार के अविश्वासियों के साथ न्याय एवं दंड का भागीदार होने के लिए नहीं (प0 थिस्स0 5:1–11)।

"अतः भाइयों, दृढ़ रहो तथा उन रीति–विधियों में स्थिर रहो जिनकी शिक्षा तुमने हमसे मौखिक या पत्रों के द्वारा प्राप्त की है। अब स्वयं हमारा प्रभु यीशु मसीह तथा पिता परमेश्वर जिसने हमसे प्रेम किया और अनुग्रह से अनन्त शांति तथा उत्तम आशा दी है, तुम्हारे हृदयों को भलाई के प्रत्येक कार्य तथा वचन में दृढ़ करे

और शांति दे" (दू0 थिस्स 2:15–17) परमेश्वर की संतानों के लिए परमेश्वर की ओर से उद्धार, आशा और अनुग्रह की ईश्वरीय योजना है। अतः पौलुस ने थिस्सलुनीकियों की मंडली को उस सत्य पर विश्वासपूर्वक स्थिर रहने के लिए प्रोत्साहित किया जिसकी उन्हें शिक्षा मिली थी (यूह0 8:32)। यदि वे भविष्य सम्बन्धी बातों के बारे में चिन्ता व संदेहपूर्ण विचार के साथ जीवन व्यतीत करते तो अविश्वास में विचरण करते; और अविश्वास में होने पर हम सत्य को पहचानने की क्षमता खो देते हैं (इफि0 4:17–18)। झूठी शिक्षाओं के धोखे में आने पर हम उन चीजों के बारे में चिन्तित होने लगते हैं जिनके बारे में सत्य में स्थिर रहने पर सोचते भी नहीं। यहां पौलुस के प्रार्थनापूर्ण शब्दों पर ध्यान दें: "अब स्वयं... पिता परमेश्वर जिसने हमसे प्रेम किया और अनुग्रह से अनन्त शांति तथा उत्तम आशा दी है, तुम्हारे हृदयों को भलाई के प्रत्येक कार्य तथा वचन में दृढ़ करे"।

परमेश्वर यह सब हमारे जीवन में कैसे करेगा? सत्य में हमारी अगुवाई करते हुए और मसीह के साथ एक गहरी व स्थिर संगति–सहभागिता में ले जाने के द्वारा। परमेश्वर के प्रेम एवं उसकी अनन्त शांति के रसास्वादन तथा उसमें हमारी स्थिरता से पूर्व परमेश्वर का ज्ञान होना आवश्यक है। जैसे–जैसे पवित्र आत्मा हमारे जीवन में परमेश्वर के ज्ञान का प्रकटन करता है, वैसे–वैसे परमेश्वर पर हमारा विश्वास बढ़ता जाता है और इसी अनुपात में हम उसमें शांति पाते व स्थिर होते जाते हैं। यह पवित्र आत्मा का कार्य है; हमारे किसी कर्म–प्रयास की उपज या प्रतिफल नहीं। यह आत्मिक कार्य केवल पवित्र आत्मा की इच्छा व कार्य–योजना के अनुसार ही सम्पन्न होता है।

✞ ✞ ✞

इस श्रंखला की पुस्तकों का निम्नलिखित क्रम में अध्ययन ज्यादा लाभप्रद होगा :

1. उत्पत्ति और उद्धार की कहानी
2. सुदृढ़ आधार
3. परमेश्वर-कृत उद्धार
4. प्रेरितों के कार्य
5. वह मुझमें और मैं उसमें
6. रोमियों
7. इफिसियों
8. पहला कुरिन्थियों
9. पहला तीमुथियुस
10. तीतुस
11. पहला और दूसरा थिस्सलुनीकियों
12. प्रकाशितवाक्य